आदमी नही है



राजस्थान साहित्य अकादमी उदयपुर के आर्थिक सहयोग से प्रकाशित

कवि प्रकाशन, बीकानेर

आदमी नहीं है



श्रीमती भगवती पुरोहित

प्रकाशक
कवि प्रकाशन
लखोटियो का चौक बीकानेर 334005

मूल्य अस्सी रुपये मात्र

सस्करण 1995

आवरण सन्नू हर्ष

मुद्रक
साखला प्रिण्टर्स सुगन निवास
चन्दन सागर, बीकानेर

ISBN 81-86436-00-6

AADMI NAHIN HAI (POETRY) BY OM PUROHIT 'KAGAD'

Rs 80 00

समर्पण

स्व दादाजी श्री चुन्नीलाल पुरोहित
स्व दादीजी श्रीमती जीया देवी
स्व नानाजी श्री तेजमाल वोहरा
स्व नानीजी श्रीमती दयाकृष्णी
स्व चाचाजी श्री ख्यालीराम पुरोहित
एव
स्व मासाजी श्री भीखाराम पुरोहित
की
मधुर स्मृति को सादर।

उस समय
किस को दोष दे
जब
हमारे हाथ मे
लोहा हो
घन भी
खुद उठाये हो
और
हथियार बनाना चाहते हुए भी
खिलौना बन जाये ?

अनुक्रम

आदमी नहीं है

बहुत नाम था मिट्टी का
मिट्टी भिगोई गई
थापी और पकाई गई
मिट्टी ईंट बनी

ईट का बहुत नाम हुआ
लोग भूल गये मिट्टी को।

ईट से घर वना
घर का वहुत नाम हुआ
ईट भुला दी गई।

घर,
वहुत फैला घर
घर मे आया आदमी
अब आदमी
वहुत वड़ा हो गया
आदमी का वहुत नाम है
आदमी के सामने
घर बिल्कुल गौण हे
लेकिन
भूली गई मिट्टी
आज भी
घर के नीचे है
भूली गई ईंट
आज भी
घर की दीवारो मे है
परन्तु
आदमी के भीतर
आदमी नही है।

सोने के उस वक्त
बचाव दस्ते के लोग
कैसे नियोजित करते हैं दगे ?

राम अवतार
लाठी ठोकता
बहुत कहता है
जागते रहो।
मगर
शहर है कि, आख खुली होने पर भी
बहुत सोता है
रोता है
जाग कर बहुत रोता है
राम अवतार का चोकीदार
शहर के विरुद्ध
रचे जा रहे
लगातार षड्यन्त्र को देखकर।

राम अवतार की मुट्ठी
बहुत कसती है
मगर लाठी की हद
नही लाघ पाती।
लोग है कि, सोये है चैन से
नग धड़ग पलगो पर
मगर
राम अवतार को इतजार है,
रात सरीखी भोर का।

आग की चिनगिया ढूढ़ रहे है
यदि हमे मिली
तो हम फूस बटोरेगे
फूक मारेगे
और कमरा गर्माने से पहले
शहर भर पर छा रही
समूची बर्फ पिघलायेगे
पहाड़ो को नगा करेगे
समूचे दोहन के लिए।

यदि हमे
दिन रात की मेहनत
और समूची राख के दोहन के बाद
एक भी चिनगी न मिली
तो हम शहर को लाघ कर आयेगे
पहाड़ो को रौंदेगे
कुचलेगे बर्फ को

और
निकाल कर उसके सीने से पत्थर
जलायेगे आग
आपस मे रगड़ कर
और फिर
पूरे बदन पर
अगारे सहेज कर लायेगे
एक एक गाव
एक एक शहर के लिए
ताकि वे बर्फ को फिर

मुक्ति

घर खाली होने के कारण
दहेज न दे पाने का
दु ख वाटने
विरमली की लाश
ससुराल से आई देख
दूसरी जवान वेटी को
लग्न मडप से उठा
अग्नि के फेरो की वजाय
अग्नि के घेरो मे डाल
तीसरी का घाटा मोस
मौन खड़ा है दीपला
जीवन भर की
राड़ खत्म कर
पितृदायित्व से मुक्त
होठो पर
मद-मद मुस्कान
तालू से चिपके
धीर-गम्भीर शब्द
न रहा वास
न बजेगी वासुरी।

आओ।
अव दो भले ही आवाज
इक्कीसवी सदी मे जाने को
दीपला तैयार है।

मुक्ति

घर खाली होने के कारण
दहेज न दे पाने का
दु ख बाटने
बिरमली की लाश
ससुराल से आई देख
दूसरी जवान बेटी को
लग्न मडप से उठा
अग्नि के फेरो की बजाय
अग्नि के घेरो मे डाल
तीसरी का घाटा मोस
मोन खड़ा है दीपला
जीवन भर की
राड़ खत्म कर
पितृदायित्व से मुक्त
होठो पर
मद-मद मुस्कान
तालू से चिपके
धीर-गम्भीर शब्द
न रहा वास
न बजेगी बासुरी।

आओ।
अब दो भले ही आवाज
इक्कीसवी सदी मे जाने को
दीपला तैयार है।

होगा झौपड़ी से निकले
भावो का सचार यहा
मैली-कुचेली
कृषकाया से मिल
वसुधेव कुटुम्वकम् के
बोल सुनायेगी कविता।

कविता अव
प्रेयसी का श्रृगार नही हागी
कविता अब
तख्त-ओ-ताज का
प्रचार नहीं होगी
सच बोलू
कविता अव लिग बदलेगी
यदि चूकेगी कहीं इस मे
तो भी भाषा के दरबार म
शब्दा की तलवार होगी कविता।।

कविता अव
शाति स्थल
शक्ति स्थल
और राजघाट के मुए सपने
नही दोहरायेगी
कविता अव खुद सक्षम है
अपने मान बतायेगी
कविता अव
अपने गान सुनायेगी।

वह लडकी - दो

मेरे सपनो म
प्रतिदिन
एक लड़की आती है
जो जागते मे
अक्सर इधर-उधर
नजर भी आ जाती है।

आवारा भाई
और बेसहारा मा-बाप की
एक मात्र सहारा वह

भाई को
उसका घर से निकलना
कभी अच्छा नही लगा
इसीलिए वह
हर शाम
पूरी वोतल ताड़ी पीता है
और
साड़ी के पल्लू की गाठ खोल
जव वह
दस-दस के दो नोट
उसकी हथेली पर रखती है
उसे
सावित्री से कभी कम
नजर नही आती।

रात को दरोगा
उसके घर के वाहर
गश्त के वक्त
सीटी क्यो वजाता है
उसे ऐतराज हे
मगर
आवारागर्दी के आरोप मे
जव वह पकड़ा जाता है
ओर वह लड़की
जमानत वनती है
तव उसके सारे ऐतराज
उन्नीसवी सदी हो जाते हैं।

उस के सपने

वह
हर रोज
काम से लौटने के बाद
सपने देखता है।

वह देखता है
उसका टीसता बदन
मखमल के कालीन पर
पसरा हुआ है
और
कई कोमल हाथ
मालिश कर रहे हैं

उस के सपने

वह
हर रोज
काम से लौटने के बाद
सपने देखता है।

वह देखता है
उसका टीसता वदन
मखमल के कालीन पर
पसरा हुआ है
और
कई कोमल हाथ
मालिश कर रहे है

सामने पड़ा टी वी
चौवीसो घटे
उसकी मनचाही
फिल्मे दिखा रहा है।
उसका मालिक
डाकघर का डाकिया है,
और
सुवह शाम
डाक की जगह
रोटिया वाटता है।

देश के चौवीस घराने
अशोक चक्र मे खड़े हैं
और उसको वह
अपनी अगुलियो पर चलाता है।

वह सपने म जव भी
कुछ आगे वढ़ता है
तुम्हारी कसम
वहुत वड़वड़ाता है,
मैं अपना
सव कुछ लुटा सकता हू
परन्तु
अपना अगूठा
नहीं कटवा सकता
मा कसम
मैं इसी की खाता हू।

अधेरे वद कमरे मे
जव मतपेटिया
उसका मत मागने
उसके करीव आती है
वह चीख पड़ता है - नही।
मै, अपना मत
खुद डालूगा
यदि आगे वढ़ी
तो भून डालूगा।

मै देखता हू
पूरी रात
उसकी मुट्ठी तनी रहती है
राम जाने
उसकी किस के साथ ठनी रहती है।

परन्तु
दूसरे दिन
जव वह काम पर लौटता है
गुम-सुम
अकेला
वहुत अकेला
जवड़े भीच कर वैठता है
और मुझे न जाने क्यो
सत्ता के गलियारे मे
उल्लू वोलता सुनाई पड़ता है।

तुम तक पहुचने की
औकात रखती हैं।

तुम
हर वार
भूलते हो
और
गुब्बारो मे
हवाओं को कैद करने का
भ्रम पालते हो,
जव कि
यह सच है
गुब्बारो की हरगिज औकात नही
कि वे
हवाओं को कैद कर सके
गुब्बारे
जव भी फूटेगे
हवाए
तुम्हारे द्वारा शोपित
अपनी जगह घेरने
घमाको के साथ
तुम्हारी ओर
वढ़ेगी
हा, तव तुम
अपनी जड़े
मजवूत रखना।

उसको
क्या ई चिन्ता नहीं होगी
कि उसके घर के
कोने कोने में
छिपे शत्रु

लड़ा जाता है
जिन्दगियों के लिए
भयानक जीवन संग्राम।

मालकिन को हर रोज
चिन्ता रहेगी
घर की सफाई की
और
मकड़ी को
जाल व शिकार की।

जब तक
घर की मालकिन
चौकन्नी होकर
मकड़ी उन्मूलन अभियान
नहीं चलायेगी
मकड़ी घर के कोनो म रहेगी
और बुनती रहेगी
हर तीसरे रोज
मृत्यु के लुभावने प्रवेश द्वार।

उन तमाम ऊँचाइयो को
जो शोषण की नींव पर खड़ी हैं
अपने आक्रोश का लापा लगा
झुलसा देगा सूरज।

उस दिन
हमारे ऊपर होगा सूरज
कविता का हाथ बटाने
और कविता
अपने समय की गवाही देने
हर चोराहे पर खड़ी मिलेगी
एकदम मुस्तैद।

मेरे दोस्तो
कविता को
अपनी प्रेमिका के प्रेम की
पगार मत समझो
जो
आख मिलाने पर देना चाहो।

कविता
एक दिन
तुम से
तुम्हारी उम्र का
हिसाब मागेगी
मागेगी एक एक वर्ण
जो तुम्हे गढ़ना था
तुम्हारी सदी की
आखिरी कविता के लिए।

पेड और भेड

जब भी
मेरी आखो मे उगते हैं
नन्हे-नन्हे
हरे हरे पेड़
मेरे मन के
भीतरी कोने से आ
सब तहस-नहस कर डालती है
कमबख्त एक वहशी भेड़।

मेरे भीतर एक नदी

एक नदी
रजस्वला
जो मेरे
बहुत गहरे
बहती है
कहती है
मैं
रचना चाहती हूँ
एक हरियल ससार
लगातार

कविता के संदर्भ में

जब तक आप
सोफो मे धँस कर
दारू से डफ़ कर
कविता के होने
या न होने की
बात करते रहेगे
आप की बात
कविता के सदर्भ म
सार्थक बयान नही हो सकती।

मै मानता हू
तुम प्रतिदिन
रगते हो
अखबार के कॉलम
माडते हो
कविता की परिभाषा
मगर सोचो मेरे दोस्त
इस मे
कविता की परिभाषा नही
तुम्हारी मजबूरी है
जो सिखाती है तुम्हे
रोटी की परिभाषा
इसीलिए
कविता की परिभाषा के लिए
चलाई गई
तुम्हारी कलम
ढूढ़ती रहती है

कविता के संदर्भ में

जब तक आप
सोफे में धँस कर
दारू से डट कर
कविता के होने
या न होने की
बात करते रहेंगे
आप की बात
कविता के संदर्भ में
सार्थक बयान नहीं हो सकती।

मैं मानता हूँ
तुम प्रतिदिन
रचते हो
अखबार के कॉलम
गढ़ते हो
कविता की परिभाषा
मगर सच्चा मेरे दोस्त
इस में

और बदलती रहती है
नित नई परिभाषा
ज्यो ढूढ़ती है
एक जगली गाय
प्रतिदिन
एक नया खेत
चरने के लिए।

इस पर भी यदि आप
बयान जारी करते हैं
बोतल के तरल का गरल पी
जिस प्रकार सुबह
पेशाब के बाद
मेदा साफ कर
ताजा दम हो जाते हैं आप
उसी तरह
गोष्ठी के बाद
आपके विचारो की कै कर
आपकी फहरिश्त से
कम हो जाते हैं लोग।

किसी असहाय अबला के
पेट मे पलते
शिशु द्वारा
अपनी मा के लिए
पौष्टिक आहार की माग सुन
कविता के द्वार खोल
उसके बयान को
एक विशिष्ट अलकार

एक विशिष्ट रस
एक विशिष्ट शिल्प
एक विशिष्ट छंद
एक विशिष्ट भाषा का
सम्मान दे
ताजा दम हो जाते हैं
और आपके बयान
उस कविता की चौखट पर
महाप्रयाण कर जाते हैं।

कविता की परिभाषा
दर्शन और कल्पना मे
आप को हरगिज नहीं मिलेगी
दम तोड़ती सदी के
पैताने बैठो
और सुनो
उस के बयान
कविता की परिभाषा
खुद-ब खुद
आपके सामने चली आयेगी
और फिर वह
आपके दर्शन
आपकी कल्पना के
सारे तर्क काटती
आपकी ही कलम से
उतर कर
एक बयान होती चली जायेगी।

मेरा गाव कहा गया

यह जो तुम
झुड के झुड चल रहे हो
जैसे
किसी युद्ध से जूझ कर लौट रहे हो
ठीक यहीं
हा, यही
मेरा गाव था
सचमुच बड़ा प्यारा गाव था।

गाव म
हरियल छावदार

अगणित पेड़ थे
पनघट थे
शर्मीली गोरियां थीं
झूम कर बरसता था पानी।

वो जो दूर ठूंठ खड़े हैं
ठीक वहीं
नीम के पेड़ थे
और भी थे बहुत से पेड़
पेड़ों पर कूकती थी कोयल
उन्हीं की छांव में
नाचते थे मोर/और उन्हीं के नीचे से
निकलता था खेतों को जाता
एक सर्पीला रास्ता
जिस पर सुनाई देती थी
किसानों
ग्वालों
गडरियों की मीठी टिचकारियां।

अरे।
यही तो है वह रास्ता
जो शहर को जाता था
रास्ता,
जिसे हम पगडंडी कहते थे
पगडंडियों पर होते थे
कुछ आते
कुछ जाते
मानवी पैर

पगडडियो के किनारे
होते थे हरियल कैर।

और हा
यहीं उफनती थी घग्घर
जिस से जूझते हुए
हम जाते थे दूसरे किनारे
जिस को अव आप
करते हैं पार
मोटर के सहारे।

वो
जो अव
गत्ता फैक्ट्री हे
वही तो था
एक हरामरा
भरापूरा जगल
जहा
वावळी
फोग
शीशम
कीकर
खेजड़ा, जाल
रोहिड़ा और कूमटा
करते थे मगल।
यह जो तुम्हारा पार्क है
जहा लोटते हैं कुत्ते
ठीक यहीं थी चौपाल

जिस पर
हर शाम
खेत से थके-हारे लौट
बाबा
रामू काका
फत्तू
अल्लादित्ता ताऊ
और बाहर से आये बटाऊ
हताई करते थे।

जरा ठहरो।
मुझे बताओ
वो मेरा गाव
कहा गया
कौन लील गया उसे
कौन छोड़ गया
कथित तरक्की पसद धुआ ?
अब
क्यो नही मडते
पगडडियो पर मानवी पदचिह्न ?

तुम जाओ भले ही
इक्कीसवी सदी मे
मुझे मेरा वही गाव लौटा दो
या फिर बता दो
उस का नाम
जो मेरे गाव को लील गया।

रोटी की बात

यदि कोई वनविलाव
छीन कर आपके हाथ से
ले जाता है रोटी
तो कहा है
बात बुरी या छोटी।

माना
रोटी तुम्हारे लिए है
तुम रोटी के लिए ही
प्रयत्नशील हो निरन्तर
मगर
इसी तरह
और भी तो हो सकता है
साधक कोई सजीव
जिसकी साध्य हो रोटी।

कल फिर एक तारीख है

कल फिर
एक तारीख है
कल फिर
दूध वाला
परचूनवाला
पान वाला
और न जाने कोन-कौन सी
बला वाला
पैसे माग ले जायेगा।

कुछ
बच्चो की स्कूल फीस मे
कुछ पानी बिजली के बिल मे
जाते-जाते
वेतन चुक जायेगा
और यू उसका सफर
अधर मे रुक जायेगा।
कल फिर तुम
अपनी साड़ी के लिए
बच्चो की ड्रेस के लिए

अपनी सहेलियो की
उधार चुकाने के लिए
पैसे मागोगी
मैं
नहीं होने की बात कहूगा
तुम रुठोगी
मैं मनाऊगा
तुम मान जाओगी
फिर मैं हसूगा
तुम हसोगी
वस यू ही
जिन्दगी
एक माह और खिसक जायेगी।
उसके बाद
फिर एक तारीख आयेगी
तुम्हारी महत्वाकाक्षाए
और
घर की जरूरते
मुह वायेगी
नतीजा
तुम्हे पता है
इस लिए निराश मत होना
यह वह धारे हैं
जो यू ही वहते हैं
वस इसी को
हम लोग जिन्दगी कहते हैं।

इन्कलाब

कुछ लोगो ने
भीड़ से कहा
वो जो मोटे पेट वाले हे
और
ऊची अट्टालिकाओं मे बैठे है
इन्होंने ही
तुम्हारा शोपण किया है
तुम्हारे हिस्से को
अपनी तिजोरियो मे भर लिया है,
यही कारण है
कि तुम दवे-कुचले और धनहीन हो।

उठो।
सघर्प करो
इनके विरुद्ध
फोड़ डालो इनका पेट
वोटी वोटी नोच डालो
और
तिजोरिया लूट कर
अपने शोपण का
सदियो पुराना हिसाव
चुकता कर लो।
तुम्हे इन्कलाव लाना है

मारो इन्हे
मारो! मारो!!

भीड़ ने
ऐसा ही किया
सदियो के शोषक मारे गये
और
भीड़ को भीड़ मे
शहीद होने का गौरव मिला।
वे लोग
उठ कर आये
जो भीड़ का नेतृत्व कर रहे थे
मगर
भीड़ मे सब से पीछे थे
ऊची आवाज म चिल्लाये
कोई है।
शून्य मे उनकी आवाज
लौट आई
उन्होने
अट्टहास किया
सारा माल
अपनी झोली मे डाल
महल तक आये
राजसिंहासन पर बैठ
नारा बुलन्द किया
इन्कलाब!
जिन्दावाद! जिन्दावाद!!
अनाम भीड़!
जिन्दावाद! जिन्दावाद!!

भ्रम पालता है आदमी

सूर्योदय से सूर्यास्त तक
अपने वदन पर
कपड़ो का भार
ढोते-ढोते
थक जाता है आदमी।

साँझ ढले
उनके लिए
दीवारो पर
लम्बाई मे उभरी
खूटिया तलाशता है आदमी
मगर
दुनिया का भार
अपने कधो पर
ढो लेने का
दिन भर
भ्रम पालता है आदमी।

ढाई आखर

उस ने
वह पूरी किताब पढ़ ली
अब वह
पूरी किताब है
मगर
उसे
आज तक
कोई पाठक नहीं मिला।

उस ने
जो किताब पढ़ी थी
उसे अब तक
दीमक चाट चुकी होगी
लेकिन
वह दीमक के लिए नहीं है
खुल जायेगा
एक दिन
सब के सामने
और
बचवा देगा
अपने ढाई आखर सब को।

स्वाद बतायेगी कविता

जब-जब भी
हलक के पिछवाड़े मरेगा आदमी
उसकी अगाड़ी
जन्म लेगी कविता

जो चीख चीख
सिहनाद करेगी
कि, अब कुछ सहन नही होगा
घिसटती ज़िदगी को
सर्प की सी योनी से
मुक्त होना होगा
और तब सत्रासो का
फदा काट
तन कर चलने का
स्वाद बतायेगी कविता।

अपने-अपने हिस्से के
घावो का धो
सदी को मवाद मुक्त कर
वण शब्दो की
शब्द वाक्यो की
वाक्य कविता की
कविता जन-जन की
पक्ति मे आ कर बैठेगी
और फिर कविता
महाभारत के बाद की
ठडी बयार होगी
सच पूछिये
वह कविता
सदाबहार होगी।

चुभन

जूती मे उभरी
एक ज्ञात कील
चुभ कर भी पाव को
उतना दर्द नहीं देती
जितना
एक अज्ञात अनचुभी कील
दिल को देती है।

दर्द तो दर्द है
मगर
पाव और दिल के बीच
जितना अतर है
ठीक उतना ही है
इनके दर्द का अतर।

सवाल है
एक दर्दभरी चुभन
मिट जाती है
दूसरी चुभन की चुभन
चुभन वन सालती क्यो रहती है ?

मै
उस मगतू मोची को जानता हू
जो एक दिन
सफेद पौशाक मे उलझे
एक चरित्र द्वारा
अपने सामने
खिसकाई गई
टूटी हुई जूती के पैंदे मे
कील ठोकते ठोकते
ठिठक गया था
ओर उस चरित्र के चेहरे को ताक
जव कील ठोकने लगा
तो कील ठुकने के वाद भी
ठोकता चला गया।

वह और ठोकता
इस बीच
उस चरित्र ने
अपनी जूती खीच ली
और पूछा
कितने पैसे ?

मगतू मोची ने
उसकी तरफ देखे बिना
पहले थूका
फिर अपनी दो अगुलिया
कठपुतली की तरह
नचाते हुए सकेत किया
अगले ही क्षण
दो सिक्के
उस के सामने थे
उन्हे उठात हुए उसन
फिर थूक दिया था
उसके बाद
वह अपनी मुसली को
देर तक ताकता रहा।

सवाल है
मगतू मोची का यह दर्द
कौन सा दर्द था
उस चरित्र का दर्द
कौन सा दर्द था ?

मुझे भी दर्द है
उन दोनो के बीच
अज्ञात दर्द के रिश्तो का
तब फिर
मेरा यह दर्द
कौन सा दर्द है ?

यह धरती तुम्हारी नही है

नही चाहिये मुझे
आपके आविष्कारो का फल
मुझे
मेरा खुला आसमान
मुक्त हवा
मानवी गधयुक्त
वही स्वतत्र धरती लौटा दो
जिसे आपने
अपने पूर्वजो से
अपने छल बल से नही
याचना मे ली थी।

याचना मे ली चीज की
सम्भार करना
तुम्हे ज्ञात नही
तो कोई बात नही
यह ऋण तो आखिर
तुम्हे चुकाना है
यह भलीभांति याद रखना।

तुम्हे
यह हक कब दिया था
मेरे पूर्वजा ने
कि, तुम उसके
आवास म छुपे
भडार को बाहर निकालो
उसी के बल
ऐसे प्रयोग कर डालो
कि पूरी मानवता को लीलने का
उसी से
एक विषैला हथियार रच डालो।
कौन कहता है
पूर्वजो को ज्ञात नहीं था
अपने ही आवास मे छुपे
रचना और विनाश के
अखूट
अकूत तत्वो का।

तुम ने तो
वह किया है

जो एक किरायेदार भी
हरगिज नहीं करता।
मैंने
कभी नही देखा
खाली घर का
एक अदना सा कमरा
किराये पर ले कर
क़िसी किरायेदार ने
पूरे घर का सामान
सड़क पर ला रखा हो।
किरायेदार जानता है
उसे केवल
अपने को मिले
उसी कमरे से मतबल है,
घर मे क्या छुपा है
उसे क्या मतबल है ?

तुम
अपनी हद से
बहुत आगे बढ़ गये हो
इसी लिए
विनाश के महाभवर मे फस गये हो
अभी वक्त है
सम्भल जाओ
यह धरती तुम्हारी नही है,
जिनकी है उन्हे सौंप दो
बिल्कुल वैसी ही
जैसी ली थी याचना मे।

रोटी के लिए

लोगो ने
हाथ फैलाये
रोटी के लिए
वह आश्वासन देता रहा
सेकता रहा
अपनी जुवान पर
अथाह रोटिया
मगर
परोसे के वक्त
खाली पड़ी
थाली के पेटे आया
वही ठनठन गोपाल।

लोगो ने कहा
रोटिया सेकने के लिए
आग की जरूरत होती है
और
आग वे ही पैदा करते हैं
जो
आग मे जलना जानते हैं
इस लिए
पहले जलना सीखो
और जानो
कि रोटी जुबान की नही
जमीन की पैदाइश है।

मा की आखो मे

मेरी मा की आखो मे
पहले
सपने थे
लेकिन अव
कैद हैं अनुभव।

मा
जव
अनुभव पाल रही थी
मैं
उसके
सपनो मे
पल रहा था।

अव
मैं
सपनो से वहुत दूर हू
और
अनुभव माग रहा हू
लेकिन
वद हैं
मा की दोनो आखे
जैसे
रखना चाहती हो उन्हे
सजोकर।

दीवार

तुम
कान रखते हो
मगर
कान मे दीवार नही रखते
इसीलिए
अघटित भी
घटित की तरह सुनते हो
और
वना डालते हो
वात का वतगड़।

तुम कहते हो
दीवारो के भी कान होते है
हा,
दीवारो के भी होते है कान
इसी लिए वे
बहुत कुछ ही नही
सब कुछ ही सुनती है
कितना अच्छा होता है
कि, तुम्हारी तरह
दीवारो के मुख नही होता
यदि दीवारे मुख रखती
तो तुम से पूछती
कि, तुम ने अपने सुख के लिए
उनके कधो पर
यह भारी भरकम छत
किस लिए रख दी ?

पुल और बाढ़

पुल
जो बाढ़ मे बह गया था
सड़क से कुछ कह गया था
सुना भी था सड़क ने
तभी तो
रह गयी थी स्तब्ध
और
ठहर गई थी दोनो ओर
जहा तक थे सर्पीले छोर।
बाढ़ भी
कुछ न कुछ
जरूर कह गई थी आदमी से
मगर
उसने कुछ नही सुना
समझा नही कुछ।
वह
आज भी बनाता है,
बना रहा है पुल
जो कुछ दिन
कुछ पल
लड़ता है बाढ़ से
और फिर बह जाता है बाढ़ मे
रह जाता है शेष
आदमी के भीतर दभ
जो रखता है जारी
ऐसा बौना सघर्ष।

तुम मेरे लिए दर्द नही हो

मै मानता हू
तुम बहुत निराश हो
इस जग मे जीते हुए
तुम्हे नही मिला कोई ऐसा
जो दे सके जगह अपने दिल मे।

मैं यह भी मानता हू
तुम बड़ी आशा से
आये हो मेरे पास
क्योकि तुम जानते हो
मै तुम्हारे सामने
हो जाता हू निरुत्तर।

लेकिन
मेरे दोस्त
आज मैं
तुम्हारी बात नही मान सकता
नही दे सकता
उस दिल मे जगह
जिस मे रहता है
दुनिया भर का दर्द।

तुम मेरे लिए
दर्द नही हो
सकून हो
इस लिए
दिल मे नहीं
रू-ब-रू रहो।

चुप्पी में कोलाहल

आजकल शहर में
हर चेहरा
मासूमियत और चुप्पी लिए घूमता है
लेकिन लगता है
इस चुप्पी में
भयकर कोलाहल कैद है
हर हलक के नीचे
अगारे सुलग रहे हैं
जैसे पॉलीथिन की थैली में
गर्म घी कैद हो।
ऐसी कैद
अधिक दिन तक
या स्थाई नहीं रह सकती
गर्म घी
पॉलीथिन को पिघला कर
एक दिन बाहर आयेगा
तब देखना
कौन कहां टिक पायेगा
जो आयेगा सामने
बस घी में सन जायेगा
घी तो घी है
कभी पिघल जायेगा
कभी जम जायेगा।

लेकिन
यह बात निश्चित कर ले
कि, आज की चुप्पी
कल का शोर बनेगी
आज की मासूमियत
कल खूखार रूप धरेगी
और
अपनी चुप्पी के दिनो के तलपट को
तुम्हारे सीने पर मिलायेगी।
तुम्हारा सीना चीर कर
तुम्हारे भीतर बैठे
दरिंदे दिल से
एक एक शोषित दिन का
हिसाब मागेगी।
उस दिन
तुम्हारी पशुता
तुम्हारी अमानवीयता
तुम्हारी तथाकथित बहादुरी
इसी चुप्पी के तलवे चाटेगी।
यह भी निश्चित कर ल
कि उस दिन
करोड़ो लोग
तुम्हारी सार्वजनिक हत्या को
अपनी दो दो आखो से देखगे
मगर फिर भी
तुम्हारी हत्या का मुकदमा
चश्मदीद गवाही को
तरस कर रह जायेगा।

सवाल

मुझ से
सवाल मत करो
मेरे दोस्त
मैं
सवालो से
बहुत डरता हू
क्योंकि
मेरे पास
पहले से ही
बहुत से
भयानक सवाल
अनुत्तरित पड़े हैं।

सवालो मे
बहुत आच होती है
बस
इसी आच के सग्रह से
मैं बहुत डरता हू।

सपने—एक

कहा से आये
वे सपने
जो मैंने
अब तक
देखे हैं
मगर
जी नहीं सका ?
और
कहा रहते हैं
वे सपने
जो मैंने
अब तक
देखे नहीं
मगर
जिन्दा हू
केवल उन्हीं के लिए
सपनो के
एक मौन पात्र सा।

सपने—दो

तेरे मेरे सपने
एक से
नहीं हो सकते
क्योंकि
जिन सपनो मे
मैं
तुम्हे देखता हू
उन मे
तुम मुझे
कभी नहीं देखते
अपने सपनो मे
और
तुम देखते हो
जो
खुद अपने सपने
उन मे
मैं नहीं
केवल तुम होते हो
फिर
क्यो कर हो सकते हैं
एक से
तेरे मेरे सपने ?

जनमत

मेरे देश का
साठ प्रतिशत जनमत
एकमत हो
हर बार
एक के विरुद्ध
मतदान करता है
मगर फिर भी
परिवर्तन नही होता।

जनमत किसे कहते है
इस पर
वह
साल भर सोचता है

कि, कुछ वातो का अर्थ
यू अनायास ही
क्यू वदल जाता है ?

हर वार
वही लकड़ी
वही कुल्हाड़ा रहता है
धारदार कुल्हाड़ा
हारता रहता है
मगर
मुड़दी सी लकड़ी
तनी रहती है
न जाने
कुल्हाड़े की धार को
हर वार
क्या हो जाता है ?

मौसम वहुत कहता है
ऐसा मत जन
जो करना पड़े दान
और विगड़ती रहे
मत और दान की शान
मगर
हवाए मौन को ही
समझ वैठी है शान।

परिवर्तन

गिद्ध की जगह
बाज आ जाये
यदि यही परिवर्तन है
तो
जीने का इच्छुक
बेचारा जीव
अपना गोश्त
कैसे बचाये ?

कुछ भी तो नही होता गाव मे

कोई भी हादसा
ऐसा नही होता मेरे गाव मे
कि, गाव गिनीज बुक मे
या
अखबार के आउटलुक मे
अकित हो सके।

गाव बेचारा
गाव है
सुबह जाग कर
दिन भर थकता है
और
रात को ओकडू हो कर
बस, सो भर जाता है।

लम्बी बीमारी झेल कर
डायलेसिस पर
अधिक दिन जीने का रिकार्ड
नही हो सकता मेरे गाव का
वह जिस दिन
बीमार होता है
पाच सात काढ़े
तुलसी का पत्ता
पडित जी का झाड़ा ले
उलझी हुई
मूज वाली खाट पर
उसी दिन
दम तोड़ देता है।

पुलिस यातना
अपहरण
बलात्कार
दजनो बोफोर्स काड
घोटाले
दिन भर झेल कर
एक बार भी
बद नही होता मेरा गाव
न नारे लगाता है
न घेराव
न प्रदर्शन
कुछ भी तो नही होता
बस, लम्बी सी सास छोड़

अगले रोज की
मजूरी की चिता मे
दवे पाव दुबक जाता है मेरा गाव।

एक बार भी
रत्तू-फत्तू
या
अल्लादित्ता के घर
आय कर वालो
कस्टम या पुलिस वालो का
छापा नही पड़ता
जव कि सारा गाव जानता है
कि वोर्डर पार से
उनके घर
वहुत कुछ आता है
ट्रको मे लद कर जाता है
गाव का यौवन
और इस पर आख तरेरने वाला
जोशीला गर्म खून।

न अधिक आवादी से अधिक
न कम आवादी से कम का
कोई रिकार्ड रखता है गाव
कभी किसी की शादी पर
न नाचता है
न दौड़ता है
न गाता है
न सिक्सर पर ताली वजाता है

न किसी टोपी वाली मूरत के गले मे
कोई माला डालता है
बस बच्चो से बतिया कर
ढोरो डागरो को घारा डाल
गरीबी की रेखा के नीचे
छटपटाता रहता है मेरा गाव।

अखबार भी जानता है
पेट काट कर
गाव डेढ़ रुपया नही जुटा सकता
इसी लिए वह
गाव को हाशिये की
किसी भी पक्ति मे
नही उतार सकता
वह जानता है
सार मे वो सार नही
जो प्रसार मे है
उसके पास सार है
अखबार तो
तब भी देख लेता है
जब डेढ़ रुपये मे
पाव भर आटे की पुडिया को
आगन के बीच खोलता है मेरा गाव।

चूल्हे पर
दलिये का पानी कभी-कभी
मगर
रगो मे खून

हर रोज खौलता है
भले ही
गाड़ियो मे लद कर
आता रहे प्रशासन गाव मे
अपनी
तिल तिल समस्याओं के लिए
पटवारी
साहूकार
पच सरपचो के पावो मे
पड़ा सड़ता रहता है मेरा गाव।

दरोगा की मूछ
शहर मे उग कर
गाव म बट खाती है
इसी लिए
अपनी पगार
जमीदार से मागने पर
धनू को
बिना न्यायालय गये
कैद हो जाती है।
धनू का बाप
सोचते सोचते
उम्र पी लेता है
कि, जब किस्मत बट रही थी
शहर से बहुत पीछे
क्यो रह गया था मेरा गाव ?

मौसम के विरुद्ध

मकान बनाने का
विचार आते ही
ईश्वर ने दिया था
शायद आदमी को
खिड़की बनाने का सोच
तभी से वह
मकान बाद मे बनाता है
खिड़की की पहले सोचता है।

खिड़की
जो बताती है
दिन उग आया
रात हो गयी
बाहर वर्षा है
लू है
आंधी है
और बला की गर्मी है
वह बाहर आये
अपना होना जताये
लड़े मौसम के विरुद्ध
एक मुकम्मल जग
ताकि
मौसम किसी का
व्यक्तित्व न लील जाये
रात ठहर न जाये
दिन सूरज पर आरूढ़ हो
भस्मासुर की तरह

भोलानाथ को
भस्म करने न पाये।

तुम्हारे होने की सार्थकता
इसी मे है
कि, जैसा तुम
अपने भीतर चाहते हो
वैसा ही
बाहर के लिए भी सोचो।

जब भी
तुम्हारे घर की खिड़किया खुले
बाहर ताकती आखे
जिस आस मे उठे
वह उसी क्षण अमर हो जाये।

मगर
तुम हो कि खिड़कियो पर
पर्दे रखते हो
कूलर अटकाते हो
टाट लगाते हो
और
अपना भीतर
मौसम के अनुकूल रखते हो
ताकि मौसम की मार
चाहे सारा बाहर लील जाये
मगर तुम्हारा भीतर
जैसा चाहो
वैसा ही सुरक्षित रह जाये।

तुम
उस समय भी
क्यों नहीं सोचते
जब हवा
खिड़कियों के पर्दों
टाट के बोरों
कूलर की सांसों को बेध कर
तुम्हारे भीतर तक चली आती हैं
और
तुम्हें बताती हैं
कि बाहर मौसम की सताई वह
तुम्हारे घर की
खिड़कियों पर लगे रक्षाकवच
कभी भी तोड़ सकती है
और तुम्हारी सांसों का नाता
किसी भी पल
तुम से तोड़ सकती है।
इसी लिए
अभी वक्त है
खिड़कियों का होना समझो
बाहर झांको
और
हवाओं के साथ मिल
मौसम के विरुद्ध
एक मुकम्मल जंग का
ऐलान कर दो।

किस को दोष दे

हम जब भी
व्यवस्था का सवाल उठाते है
कहीं न कहीं
खुद को खड़ा पाते हैं
यह बात अलग है
कि उस समय हम
अपनी भूमिका पर
निर्णायक खुद होते हैं
और
खुद को साफ बचा ले जाते हैं।

उस समय
किस को दोष दे
जव हमारे हाथ मे
लोहा हो
घन भी
खुद उठाये हो
और
हथियार वनाना चाहते हुए भी
खिलौना वन जाये ?

ऐसे मे
यदि
आप और व्यवस्था मे
ठन जाये
तो आपके सारे तर्क
काटते हुए
इतिहास के सारे तत्व
लोहे के साथ हो जाते हैं
ओर
आपके विपवाण
सूनी दिशाओं मे
भटक कर
निरर्थक चले जाते हैं
और फिर
आप जैसे लुहार
सव कुछ जानते हुए भी
लोहे को कोसते रह जाते है।

सडक-एक

यहा से वहा
दूर-दूर तक
सड़क ही सड़क
कही ओर न छोर
परन्तु
सड़क हर ओर
जो नही ठहरती
किसी शहर मे
निकल जाती है
गली मोहल्ले
चौक चौराहे
गाहे वगाहे
और
पहुच कर
दूसरे शहर मे
निकल कर
फिर फिर से
किसी शहर से
दम तोड़ देती है सड़क
हारी थकी
प्यासी हिरनी सी
क़िसी गाव के किनारे।

सडक-दो

शहर से आ कर
देती है दस्तक
गाव की दहलीज पर
और बताती है,
शहर मे
निरा अधेरा है
देखो
मेरा बदन
अधेरो ने घेरा है
तुम कभी
शहर मत जाना
मगर
गाव सड़क की भाषा
नहीं जानता
वह
मान बैठता है
सड़क को
शहर आने का निमत्रण
और
उस पर चल कर
खो जाता है अधेरो मे
फिर नहीं आ पाता
कभी लौट कर
अपने भीतर।

सडक—तीन

रेत नही चाहती
पगडडियो को खोना
विफर जाती है
गाव की ओर बढ़ती
सड़क पर
और
हाय हाय करती
विछ जाती है
उलट कर
सड़क पर
क्योंकि, वह जानती है
सड़क ले जायेगी
ढो कर गाव से
अथाह मुहब्बत
और
कर देगी कत्ल
किसी शहरी चौराहे पर।

सडक—चार

ऊंट सुनता है
सड़क के भीतर से निकलती
गाव से गई
खुशियो को
जो लौटती है शहर से
चीखे बन कर
इस लिए
ऊंट चलना चाहता है
सड़क को छोड़ कर
मगर
बेबस है
अपनी नाक के कारण
जिसकी मोहरी
थाम कर गाव
जाना चाहता है
शहर मे
सड़क के सहारे
बेघड़क।

सडक—पाच

सड़क पर चलते
ट्रक पर लद कर
बूचड़खाने जाता
बूढ़ा बैल
ऊपर से शात है
मगर
भीतर से
मौन नहीं है
वो
ताकता है सब को
मगर
पूछता है खुद से
क्या यही है वह सड़क
जिस के लिए
मैंने ककर ढोये थे
और
क्या यही है वह ट्रक
जिसे कमाया गया है
मेरे ही पसीने से
और उम्र के बल ?
यदि हा
तो बताओ आसमान
क्या यही है
श्रममेव जयते ?

सडक—छ

नदी ने
कर दिया था
बरसो पहले बद
बीच स बह कर
पार जाना
गाव का
मगर
न जाने
कहा से आई
कब आई सड़क
और
नदी के सीने पर
रेंगती हुई
ले गई
दूर
बहुत दूर
गाव को।

श्री ओम पुरोहित कागद के कविता सग्रह आदमी नहीं है की कविताए अपने समय के कुठित सत्रस्त शोषित एव पीड़ित समाज भ्रष्ट राजनीति, टूटते जीवन मूल्य एव दिशाविहीन युवा शक्ति द्वारा निरन्तर उभरने के प्रयासो को प्रतिबिम्बित करती हैं। इस सकलन की कविताए सवेदन केन्द्रित तो हैं ही साथ ही पथभ्रष्ट वर्तमान के विरुद्ध अपने हथियारो से लड़ने की चाहत भी है। कागद जी की कविताए यह बड़ी लड़ाई अपनी पैनी दृष्टि अपनी ताकत अपने हथियारो एव अपनी शर्तों के बल पर लड़ती हैं इसीलिए वे कभी हारती नहीं हैं। कविता की यही ताकत मनुष्य और उसकी जिजीविषा के लिए उभरता भरोसा इस सग्रह का काव्यात्मक प्रतिफलन है। विश्वास किया जा सकता है कि आदमी नहीं है की कविताए निश्चय ही वर्तमान दौर मे अग्रिम पक्ति मे स्थापित होगी और अविस्मरणीय रहगी।

डॉ राधेश्याम शर्मा
सह-आचार्य
राजस्थान विश्वविद्यालय जयपुर